जैन रामायण 'पउमचरिउ' और हिन्दी रामायण 'मानस'

(डॉ. श्री लक्ष्मीनारायण दुबे)

प्रभाव-सूत्र :

जैन रामायण 'पउमचरिउ' (पद्मचरित्र) के रचयिता महाकवि स्वयंभू थे और हिन्दी रामायण ''रामचरितमानस' के स्रष्टा गोस्वामी तुलसीदास थे । स्वयंभू अपभ्रंश के वाल्मीकि थे तो तुलसी अवधी के । स्वयंभू के मूल स्रोत वाल्मीकि थे और तुलसी के भी वे ही थे । स्वयंभू ने जिन कवियों का गुणगान किया था, उनमें अपभ्रंश के कवि सिर्फ चतुर्मुख हैं जिनका कोई ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है । चतुर्मुख का उल्लेख हरिषेण, पुष्पदंत और कनकामर ने भी किया था । तुलसी ने स्वयंभू की कहीं कोई चर्चा नहीं की है परन्तु महामण्डित राहुल सांकृत्यायन ने लिखा है : मालूम होता है, तुलसी बाबा ने स्वयंभू रामायण को जरूर देखा होगा, फिर आश्चर्य है कि उन्होंने स्वयंभू की सीता की एकाध किरण भी अपनी सीता में क्यों नहीं डाल दी । तुलसी बाबा ने स्वयंभू-रामायण को देखा था, मेरी इस बात पर आपत्ति होसकती है, लेकिन मैं समझता हूं कि तुलसी बाबा ने 'क्वचिदन्यतोपि' से स्वयंभू रामायण की ओर ही संकेत किया है । आखिर नाना पुराण, निगम, आगम और रामायण के बाद ब्राह्मणों का कौनसा ग्रन्थ बाकी रह जाता है, जिसमें राम की कथा आयी है । 'क्वचिदन्यतोपि' से तुलसी बाबा का मतलब है, ब्राह्मणों के साहित्य से बाहर 'कहीं अन्यत्र से भी' और अन्यत्र इस जैन ग्रन्थ में रामकथा बड़े सुन्दर रूप में मौजूद है । जिस सौरौं या सूकर क्षेत्र में गोस्वामीजी ने राम की कथा सुनी, उसी सोरों में जैन घरों में स्वयंभू-रामायण पढ़ी जाती थी । रामभक्त रामानन्दी साधु राम के पीछे जिस प्रकार पड़े थे, उससे यह बिल्कुल सम्भव है कि उन्हें जैनों के यहां इस रामायण का पता लग गया हो । यह यद्यपि गोस्वामीजी से आठ सौ बरस पहले बना था किन्तु तद्भव शब्दों के प्राचुर्य तथा लेखकों-वाचकों के जब तब के शब्द - सुधार के कारण भी आसानी से समझ में आ सकता था (हिन्दी काव्य-धारा) ।

डॉ. नेमिचन्द शास्त्री (हिन्दी-जैन-साहित्य परिशीलन, भाग १) का भी अभिमत है कि हिन्दी साहित्य के अमर कवि तुलसीदास पर स्वयंभू की 'पउमचरिउ' और 'भविसयव कहा' का अमिट प्रभाव पड़ा है । इतना सुनिश्चित है कि 'रामचरित मानस' के अनेक स्थल स्वयंभू की 'पउम चरिउ' रामायण से अत्यधिक प्रभावित हैं तथा स्वयंभू की शैली का तुलसीदास ने अनेक स्थलों पर अनुकरण किया है ।

इसके विपरीत डॉ. उदयभानु सिंह (तुलसी-काव्य-मीमांसा) का अभिमत है कि ब्राह्मण-परम्परा में लिखित ग्रन्थ ही तुलसी-साहित्य के स्रोत हैं । कुछ स्थलों पर बौद्ध-जैन राम-कथाओं से तुलसी-वर्णित रामचरित का सादृश्य देखकर यह अनुमान कर लेना ठीक नहीं है कि तुलसी ने उनसे प्रभावित होकर वस्तु-ग्रहण किया है । दोनों के दृष्टिकोण में तात्विक भेद है ।

जीवन-सूत्र :

स्वयंभू के समय में ब्राह्मण, बौद्ध तथा जैन धर्म ही भारत के प्रधान धर्म थे । तुलसी के युग में इस्लाम का राजनैतिक प्रभुत्व था ।

स्वयंभू के जीवन-काल के विषय में पर्याप्त मतभेद है । राहुलजी ने उनका जीवनकाल नवम शताब्दी के पूर्वार्द्ध में माना है जबकि डॉ. भायाणी ने उन्हें नवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में माना है । डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री ने उनका जन्म सन् ७७० बताया है । तुलसी का जीवनकाल सन् १५८२-१६२८ की कालावधि को घेरता है । 'पउम चरिउ' (सन् ८५०-६० के मध्य लिखा गया था जबकि 'रामचरित मानस' सन् १५७४-१५७७ में लिखा गया था ।)

तुलसी की धर्मपत्नी रत्नावली के समान स्वयंभू की दो पत्नियां थीं जो कि सुशिक्षिता तथा काव्य-प्रेमी थीं । प्रथम पत्नी सामिअब्बा ने कवि को विद्याधर काण्ड लिखाने में मदद की थी । द्वितीय पत्नी आइच्चम्बा ने स्वयंभू को अयोध्या काण्ड लिखने में सहयोग दिया था । उनके एकमेव पुत्र त्रिभुवन ने उनकी तीन कृतियों के अंतिम अंशों को पूर्ण किया था और वह स्वयं को 'महाकवि' कहता हुआ अपने पिता के सुकवित्व का उत्तराधिकारी घोषित करता था । उसने 'पंचमी चरिउ' ग्रन्थ को लिखा था । तुलसी उत्तर भारतवासी थे जबकि स्वयंभू दाक्षिणात्य । तुलसी उत्तर- भारत का अधिक वर्णन करते थे जबकि स्वयंभू दक्षिण भारत का । स्वयंभू अपने वर्णन में विन्ध्याचल से आगे कम ही बढ़ते थे । वस्तुतः स्वयंभू विदर्भवासी थे ।

दोनों महाकवियों की ख्याति अपने युग में फैल चुकी थी । स्वयंभू के पुत्र त्रिभुवन ने अपने पिता को स्वयंभूदेव, कविराज, कविराज चक्रवर्तित, विद्वान्, कुन्दस चूड़ामणि आदि उपाधियों से अलंकृत किया था जिससे स्वयंभू की अपने समय में ख्याति, यश तथा सम्मान की सूचना भी हमें मिलती है - तुलसी भी अपने समय में वाल्मीकि के अवतार घोषित हो चुके थे ।

साहित्य-सूत्र :

तुलसी ने द्वादश काव्य-ग्रन्थ लिखे थे । स्वयंभू-रचित तीन ग्रन्थ 'पउम चरिउ', 'रिट्ठणेमि चरिउ' एवं 'स्वयंभू-कुन्द' बताये जाते हैं । इनके अतिरिक्त स्वयंभू को 'सिरि पंचमी' और 'सुद्धय चरिय' की रचना का भी श्रेय दिया जाता है । स्वयंभू ने सम्भवतः किसी व्याकरण-ग्रन्थ की भी सृष्टि की थी । जैन विद्वान् स्वयंभू को अलंकार तथा कोश-ग्रन्थ के रचयिता भी मानते हैं । स्वयंभू ने शायद कुल सात

छद्मवेश, छद्मी, छली, छक्का नर भुवि जान ।
जयन्तसेन यह दुःखदा, छोड़त पावो त्राण ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ग्रन्थ लिखे थे । सप्तम ग्रन्थ का नाम 'सिरि-पंचमी-कहा' है । उनकी 'सप्त जिव्हा' वास्तव में उनके सात ग्रन्थ थे -

गजंति ताम्ब कइमच कुंजरा लक्ख-लक्खण-बिहीणा ।
जा सच-दीह-जीहं सयंभु-सीहंण पेच्छिति ॥

"स्वयंभू-छन्द" का प्रकाशन सर्वप्रथम हुआ । इसमें आठ अध्याय हैं जिनमें प्रथम तीन अध्यायों में प्राकृत 'कुन्दों' तथा परवर्ती पांच अध्यायों में अपभ्रंश कुंदों का वर्णन है । स्वयंभू ने अपने इस ग्रन्थ से राजशेखर, हेमचन्द्र आदि को प्रभावित किया था ।

स्वयंभू को अमर-शाश्वत बनाने वाली रचनाएं 'पउमचरिउ' तथा 'रिट्ठणेमिचरिउ' हैं । जैन-परिपाटी में 'पद्म' श्रीराम का परिचायक है । स्वयंभू जैन रामकथा गायक विमलसूरि की परम्परा के कवि थे । उन्होंने इस कथा को अनेक अभिधानों से उद्भासित किया था यथा - पोमचरिय, रामायण पुराण, रामायण, रामएवचरिय, रामचरिय, रामायणकाव, राघवचरिय, रामकहा इत्यादि । 'पउम चरिउ' पांच काण्डों में विभाजित है जबकि 'रामचरित मानस' सप्त सोपानों में । 'पउम चरिउ' में कुल मिलाकर ९० संधियां हैं - विद्याधर काण्ड - २०, अयोध्याकाण्ड - २२, सुन्दरकाण्ड - १४, युद्धकाण्ड - २१ तथा उत्तरकाण्ड - १३ संधियां । समूचे ग्रन्थ में कुल १२६९ कडवक हैं । 'रिट्ठणेमेचरिउ' स्वयंभू का सबसे बड़ा ग्रन्थ है । इसमें १८ हजार श्लोक हैं । इसमें ४ काण्ड और १२० संधियां है ।

मान्यता-सूत्र :

स्वयंभू और तुलसी रामकथा के सूत्र से सम्बद्ध थे । दोनों में लगभग ७५० वर्षों का अंतर था । दोनों के काव्य-सिद्धातों में अंतर दिखायी पड़ता है । स्वयंभूने शाश्वत कीर्ति और अभिव्यंजना को अपने लक्ष्य स्वीकार किये थे -

पुणु अथाणउ पाय मि रामायण कावैं ।
णिम्मल पुण्य पवित्र-कह-क्विणु आढ्प्पइ ।
जैण समाणिज्जंतेण थिर किचणु विपढप्पढ ॥

तुलसी के काव्योद्देश्य में राम के स्तवन के साथ आत्मकल्याण तथा परहित निहित था -

एहि महं रघुपति काम उदारा, अति पावन पुरान स्मृति सारा ।
मंगलभवन अमंगलहारी, उमा सहित, जेहि जपत मुरारी ॥

स्वयंभू को राम-कथा जैन-परम्परा से प्राप्त हुई । भगवान महावीर स्वामी, गौतम गणधर, सुधर्मा प्रभव, कीर्तिधर और आचार्य रविषेणसे यह धारा उन्हें मिली । तुलसी को स्वयंभू शिव से प्राप्त हुई । स्वयंभू रविषेण को अपना मुखिया मानते थे -

बद्धमाण-मुह-कुहर विणिग्गय । राम-कहा-णइ एह कमागय ॥
पच्छर इन्तमुह-आयरिएं । पुणु धम्मेण गुणालंकिएं ॥
पुणु पहवे संसाराराएं । किचिहरेण अणुचरवाएं ॥
पुणु रविषेणायरिय पसाएं । बुहिए अवगाहिय कइराएं ॥

स्वयंभू ने प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव की वंदना से अपना काव्यारम्भ किया है -

णमह णव-कमल-कोमल-मणहर-वर-वहल-कांति-सोहिल्लं ।
उसहस्स पाय कमलं स-सुरासुरं वन्दियं सिरसां ॥

तुलसी पार्वती-शंकर के मंगलाचरण से 'मानस' का श्रीगणेश करते हैं -

भवानीशंकरौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ ।
याम्यां बिना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वान्तस्थमीश्वरम् ॥

'पउमचरिउ' तथा 'मानस' के कतिपय कथा सूत्र भी अवलोकनीय हैं । स्वयंभू राम वनवास में सीता के वियोग में गज से मृग-नैनी सीता की बात पूछते हैं -

हे कुंजर कामिणि-गह-गमज । कहेकंहि मि दिह जइ मिगणयण ॥

'मानस' के राम भी इसी प्रकार पूछते-फिरते दिखायी देते हैं -

"हे खग मृग हे मधुकर श्रेनी । तुम देखी सीता मृग नैनी ॥

स्वयंभू के राम नीलकमलों को सीता के नयन समझते हैं तो कहीं अशोक को सीता की बांह मान बैठते हैं -

णिय-पाड़िर वेण वैयारियउ । जाणइ सीयएं हक्कारियउ ॥
कत्थइ दिट्ठइं इन्दीवरहं । जणइ घण-णयणइं दीहरहं ॥
कत्थइ असोय-तरू हल्लियउ । जानाइ घण-वाहा-डौल्लियउ ॥
वणु सयलु गवेसवि सयल महि । पल्लट्टु पडीवउ दासरहि ॥

तुलसी के राम की भी यही स्थिति है । उनको ऐसा प्रतीत होता है कि मानों सीता के अंग-प्रत्यंगों से ईर्ष्या करने वाले खंजन, मृग, कुंद, कमल आदि इस समय प्रमुदित हैं -

खंजन सुक कपोत मृग मीना । मधुप निकर कोकिला प्रवीना ॥
कुंद कली दाडिम दामिनी । कमल सरद ससि अहिमामिनी ॥
बरुन पास मनोज धनुहंसा । गज के हरि निज सुनत प्रसंसा ॥
श्रीफल कनक कदलि हरसाहीं । नेक न संक सकुच मनमाहीं ॥
सुनु जानकी तोहि बिनु आजु । हरषे सकल पाइ जनु राजू ॥

स्वयंभू ने सीता के असहाय करुण-क्रन्दन को मार्मिक रूप में प्रस्तुत किया है -

हउंपावेण एण अवगण्णेवि । णिय तिहवणु अ-मणूसउ मण्णें वि ॥
अह महं कवणु णेइ कन्दन्ती ।
नक्खण राम-वे विजइ हुन्ती ॥
हा हा दसरह माण गुणोवहि ।
हा हा जणय जणय अवतौयहि ॥
हा अपराइएं हा हा केक्कह ।
हा सुप्पेहें सुमिचें सुन्दर-मह ॥
हा सुतहण भरह भरहेसर ।
हा भामष्कुल भाइ सहोयर ॥

चोरी, चुगली, चाटुकी, चालाकी ये चार ।
जयन्तसेन तजो करो, पापों का परिहार ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हा हा पुणु वि राम हा लक्खण । को सुमरमि कहो कहपि अ लक्खण ॥

को संथवइ मइ को सुहि कहों दुक्खु महन्त उ ।

जहिं जहिं जामि हउं त त जि पएसु पतिचउ ॥

यही स्थिति 'मानस' में भी है

हा जग एक वीर रघुराया । केहि अपराध विसारेहु दाया ॥

आरति हरन सरन सुखदायक । हा रघुकुल सरोज दिननायक ॥

हा लछिमन तुम्हार नहिं दोसा । सो फलु पायउं कान्हेउं रोसा ॥

विपति मोरि को प्रभुहि सुनावा । पुरोडास चह रासभ खावा ॥

सीता के विलाप सुनि भारी । भये चराचर जीव दुखारी ॥

अहिंसा मूलक जैन धर्म के अनुयायी होने के कारण स्वयंभू कहीं भी आखेट का वर्णन नहीं करते परंतु युद्ध-वर्णन में उनका उत्साह अमित है और उन्होंने प्रचुर युद्ध-वर्णन प्रस्तुत किये हैं । उनमें वस्तु-वर्णन तथा गणना की प्रवृत्ति का आधिक्य है । वे वृक्षों के नामों की लम्बी सूची प्रस्तुत करते हैं । उनकी प्रवृत्ति मन्दोदरी तथा सीता के नख-शिख-वर्णन में बड़ी रमी है । यह स्थिति तुलसी की नहीं है । दोनों कवियों में धार्मिक भावना की प्रधानता है । स्वयंभू ने जैन धर्म के आचारात्मक तथा विचारात्मक - दोनों पक्षों का निरूपण किया है । स्वयंभू के रामचन्द्र प्रभु जिनकी स्तुति करते हैं -

जय तुहुं गइ तुहुं मइ तुहुं सरणु । तुहुं माया-वप्पु तुहुं बन्धु जणु ॥

तुहुं परम-पक्खु परमति-हरू । तुहुं सहबहुं परहुं पराहियरू ॥

तुहुं दंसणे णाणे चरिचे थिउ । तुहुं सयल-सुरासुरैहि णमिउ ॥

सिद्धनो मन्ते तुहुं वायरणें । सज्झाएं झाणे तुहुं तव-चरणें ॥

अरहन्तुं वुदु तुहुं हरि हरूर वि तुहुं अण्णाण-तमोह-रिउ ।

तुहुं सुहुम निरंजण परमणु तुहुं रवि वम्भु सयम्भु सिउ ॥

स्वयंभू का दृष्टिकोण उदार तथा सहिष्णू था । उन्होंने कहीं भी ब्राह्मण धर्म की निन्दा नहीं की । उन्होंने हिन्दु देवताओं, अवतारों तथा भगवान बुद्ध का नाम सम्मान के साथ लिया है । उन्होंने अपने धर्म का प्रचार अवश्य किया है परंतु परनिन्दा में वे नहीं पड़े ।

नारी-सूत्र :

स्वयंभू के समस्त पात्र जैन धर्मावलम्बी हैं । उनके समस्त नारी-पात्र 'जिन-भक्त' हैं । तुलसी ने अपने नारी-पात्रों में जिस उदात्तता के अंश की समाविष्ट किया था, उसका अभाव स्वयंभू में दिखायी पड़ता है । स्वयंभू ने सुप्रभा, अपरम्मा, अंजना, कल्याण, माला आदि अनेक नारी-पात्रों की नूतन सृष्टि की है ।

स्वयंभू की कौशल्या 'अपराजिता' है । उसमें सिर्फ पुत्र-प्रेम है । तुलसी के मातृत्व तथा मार्मिकता का उसमें अभाव है । तुलसी की कैकयी स्वयंभू की कैकयी से अधिक प्राणवान् है । 'पउम चरिउ' में सुमित्रा सामान्य नारी है । स्वयंभू की उपरंभा की अतीव कामासक्ति को तुलसी का मर्यादावादी कवि कभी स्वीकार नहीं करता । नारी के विषय में दोनों महाकवियों के समान विचार हैं ।

अहो साहसु पमण्इ पहु मुयवि । ज महिल काइ तं पुरिसु णवि ।

दुम्महिल जि भीसण जम-णयरि । दुम्महिल जि असणि जगत-यरि ॥

(स्वयंभू)

काह न पावक जारि सके, का न समुद्र समाइ ।

का न करे अबला प्रबल, कैहि जग कालु न खाइ ॥

स्वयंभू का नारी-चित्रण स्थूल, परिपाटीगत तथा औपचारिक है । उसमें तुलसीकी - सी कलात्मक तथा मनोवैंज्ञानिकता नहीं है । तुलसी का रावण संयत है परन्तु स्वयंभू का रावण सीता के प्रति अपनी कामुकतापूर्ण मनोवृत्ति तथा चेष्टाओं का प्रदर्शन करता दिखायी देता है । वह चोर की भांति सीता का सौन्दर्य निहारता है और उससे श्रीराम को प्राप्त होने वाले भौतिक आनन्द की कल्पना में डूबकर ईर्ष्यालु हो जाता है । विराग प्रधान होने के कारण स्त्री-रति की बुराई से जैन धर्म भरा पड़ा है । स्वयंभू ने नारी के सौन्दर्य की नश्वरता का रूप बारम्बार उद्घाटित किया है ।

चरितकाव्य-सूत्र :

'पउम चरिउ' और 'मानस' दोनों चरितकाव्य हैं । दोनों को पौराणिक शैली के महाकाव्यों की श्रेणी में स्थान दिया गया है । स्वयंभू ने अपने नायक श्रीराम में मनुष्यत्व अधिक देखा है और इस दृष्टि से वे आधुनिक काल के माइकेल मधुसूदन दत्त के अधिक निकट दिखलायी देते हैं । इसके विपरीत तुलसी के राम परब्रह्म परमेश्वर हैं । स्वयंभू का कवि-हृदय रावण में जितना रमा है, उतना राम में नहीं । स्वयंभू सीता का रूप-सौन्दर्य इस प्रकार नख-शिख के रूप में उपस्थित करते हैं -

सुकइ-कह-व्व सु-सन्धि-सु सन्धि य । सु-पय सु-वयज सु सद्द सु-वद्धिय ॥

थिर-कलहंस-गमण गइ-मंथर । किस मज्झारे णियम्बे सु-वित्थर ॥

रोमावलि मयरहरूत्तिण्णि । णं पिम्पिलि-रिंकोलि विलिण्णी ॥

अहिणव-हुंड, पिंड-पील-त्थण । णं मयगल उर-खंभ णिसुंमण ॥

रेहइ वयण-कमलु अलंकउ । णं माणस-सरे वियसिउ पंकउ ॥

सु-ललिय-लोलण ललिय-पसण्णह । णं वरइत्त मिलिय वर-कण्णइ ॥

घोलइ मुद्दिठहि वेणि महाहणि । चंदन-तयहि ललइ णं णाहणि ॥

तुलसी का सौन्दर्य वर्णन आंतरिक तथा सात्विक है -

सुन्दरता कहुं सुन्दर करइं । छबिगृह दीपसिखा जनु बरइं ।

सब उपमा कवि रहे जुठारी । केहि
पटतरो विदेहकुमारी ।

और

सिय वरनिऊ तेइ उपमा देई ।
कुकवि कहार अजसु को लेई ।

जें पटतरिय तीय सम सीया ।
जग असि जुवति कहां कमनीया ।

टंटाटिक टिक टनटनी, टीपस राखणहार ।
जयन्तसेन यहाँ सभी, पाते दुःख अपार ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जें कबि सुधा पयोनिधि होई । परम रूपमय कच्छपु सोइं ।
सोमा रजु मंदरू सिंगाऊ । मपै पानि पंकज निज मारू ।
एहिविधि उपजै लच्छि तव सुन्दरता सुखमूल ।
तदपि संकोच समेत कवि कहहिं सीय समतूल ॥

स्वयंभू में तुलसी के समक्ष सामाजिकता तथा समाज-अनुशासन का अभाव है । 'पउम चरिउ' में विभीषण जनक और दशरथ को मरवाने का असफल प्रयास करता है । भामण्डल अपनी भगिनी सीता पर कामासक्त हो जाता है । रावण सीता को वायुयान में बिठाकर लंका घुमाता है । ये सब स्वयंभू की आश्चर्यजनक उद्भावानएं हैं ।

स्वयंभू ने रावण को दशमुखी राक्षस न मानकर विद्याधर वंशी माना है । उनके सभी पात्र जन्मतः जैन मतानुयायी हैं । स्वयंभू के लक्ष्मण रावण का वध करते हैं क्योंकि वे वासुदेव हैं । स्वयंभू ने राम-कथा-साहित्य के श्रृंगारी रूप का मार्ग प्रशस्त किया था । तुलसी ने रामकथा को घर-घर में गुंजायमान कर दिया और उसके शाश्वत आदर्शों से जनता प्रेरणा पाने लगी । स्वयंभू राज्याश्रित कवि थे परंतु तुलसी अपने चार चने में ही मस्त रहे और कमी किसी राजा की परवाह नहीं की । संरचना के दृष्टिकोण से स्वयंभू तुलसी को प्रभावित करते हैं । स्वयंभू में रसात्मकता मिलती है तो तुलसी में रमणीयता ।

प्रतिबिम्ब सूत्र :

तुलसी ने महर्षि वाल्मीकि (रामायण) तथा वेद व्यास (महाभारत) की तो वन्दना की है परन्तु स्वयंभू का कहीं नाम नहीं लिया -

सीताराम-गुण ग्राम पुण्यारण्य-विहारणौ ।
वन्दे विशुद्ध विज्ञानौ कवीश्वर कपीश्वरौ ॥

और

व्यास आदि कवि पुंगव नाना ।
जिन सादर हरि सुजस बखाना ॥

तुलसी के समान स्वयंभू ने भी अपने पूर्वज कवियों का ऋण स्वीकार किया है । तुलसी ने बिना किसी का नाम लिये प्राकृत-कवियों का स्तवन किया है -

जे प्राकृत कवि परम सयाने ।
भाषा जिन्ह हरि चरित बखाने ॥

डॉ. शम्भूनाथसिंह (हिन्दी महाकाव्य का स्वरूप-विकास) ने इस प्रसंग में लिखा है कि यहां प्राकृत कवि का अभिप्राय प्राकृत और अपभ्रंश में रामकथा लिखने वाले विमलसूरि, स्वयंभू, पुष्पदेव आदि कवियों से है । रामचरित मानस की भाषा और शैली पर स्वयंभू का प्रभाव तो स्पष्ट दिखाई देता है ।

तुलसी ने 'मानस' की समाप्ति की पुष्पिका में लिखा है -
या पूर्वं प्रभुणा कृतं सुकविना श्रीशम्भुना दुर्गमं ।
श्रीमद्रामपदाजभक्तिमनिशं प्राप्त्यै तु रामायणम् ।
मत्वा तद्रघुनाथनाम निरतं स्वान्तस्तमः शान्तये ।
भाषाबद्धमिदंचकार तुलसीदासस्तथा मानसम् ॥

कतिपय टीकाकारों ने 'कृतं सुकविना श्रीशम्भुना' से संकेतार्थ निकाला है कि सुकवि स्वयंभू ने पहले जिस दुर्गम रामायण की सृष्टि की थी, उसी को तुलसी ने 'मानस' के रूप में भाषाबद्ध कर दिया ।

डा. संकटा प्रसाद उपाध्याय (कवि स्वयंभू) की भी सम्मति है कि स्वयंभू ने तुलसी को प्रभावित किया था परंतु वे धार्मिक बाधा के कारण स्वयंभू का नामोल्लेख नहीं कर सके । तुलसी वर्णाश्रम-विरोधी किसी अन्य धर्म अथवा उसके उन्नायक कवि का नाम नहीं लेना चाहते थे ।

स्वयंभू-रामायण तथा तुलसी-मानस में अनेक स्थलों में साम्य दिखायी पड़ता है । स्वयंभू ने अपने काव्य सरिता वाले रूपक में लिखा है कि यह अक्षर व्यास के जल-समूह से मनोहर सुन्दर अलंकार तथा छंद रूप मछलियों से आपूर्ण और लम्बे समास रूपी प्रवाह से अंकित है । यह संस्कृत और प्राकृत रूपी पुलिनों से शोभित देशी भाषा रूपी दो कूलों से उज्ज्वल हैं । इसमें कहीं-कहीं घन शब्द रूपी शिला-तल हैं । कहीं-कहीं यह अनेक अर्थरूपी तरंगों से अस्त-व्यस्त-सी हो गई है । यह शताधिक आश्वासन रूपी तीर्थों से सम्मानित है -

अक्खर-बास-जलोह मनोहर । सु-अलंकार हन्व मच्छोदर ॥
दीह समास पवाहावंकिय । सक्कय-पायय-पुलिणा लंकिय ॥
देसी-भासा-उभय-तहुज्जल । क वि दुक्कर-घण-सद्द-सिलायल ॥
अत्थ-वहल-कल्लोलाणिट्ठिय । आसासय-सम-तूह-परिट्ठिय ॥

तुलसी का काव्य-सरोवर-रूपक इस प्रकार है -

सप्त प्रबंध सुमग सोपाना । ग्यान नयन निरावत मन माना ।
रघुपति महिमा अगुन अबाधा । वरनव सोइ वर वारि अगाधा ।
रामसीय जस सलिल सुधासम । उपमा बीचि विलास मनोरम ॥
पुरइन सधन चारु चौपाई । जुगुति मंजु मनि सीय सुहाई ॥
छंद सोरठा सुन्दर दोहा । सोइ बहुरंग कमल कुल सोहा ॥
अरथ अनूप सुभाव सुभासा । सोइ पराग मकरन्द सुवासा ॥
सुकृत पुंज मंजुल अलि माला । ग्यान विराग विचार मराला ॥
धुनि अवरेव कवित गुन जाती । मीन मनोहर जे बहु भांती ।
अरथ धरम कामादिक चारी । कहब ज्ञान विज्ञान विचारी ॥
नवरस जप तप जोग विरागा ।
ते सब जलचर चारु तड़ागा ॥

'पउम चरिउ' में राम-कथा का श्रीगणेश श्रेणिक की शंका से होता है -

परमेसर पर-सासणेहि सुव्वह विवरेरी ।

दयाहीन दागी तथा, दुर्गुण देखन हार ।
जयन्तसेन तजो सदा, ये दुःख के दातार ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कहें जिण-सासणे केम थिय कइ राघव-केरी ॥

वह आगे व्यंग्य करता है -

जइ राम हों तिहुअणु उवरें माइ । तो रावणु कहि तिय लेवि जाइ । 'मानस' में भी पार्वती शंका करती है -

जो नृप तनय त ब्रह्म किमि, नारि-विरह मति मोरि ।
देखि चरित महिमा सुनत, भ्रमति बुद्धि अति मोरि ॥

भरद्वाज की जिज्ञासा भी इसी प्रकार है -

प्रभु सोइ राम कि अमर कोइ जाहि जगत त्रिपुरारि ।
सत्य धाम सर्वज्ञ तुम्ह करहु विवेक विचारि ॥

'पउम चरिउ' में श्रेणिक की शंका के निवारण हेतु गणधर गौतम राम-कथा का उद्‌भव इस प्रकार निरूपित करते हैं -

बद्धमाण मुह कुहर विणिग्गय । राम-कहा णह एह कमागय ॥
एह राम कह सरि सोहन्ती । गणहर देवहि दिट्‌ठवहन्ती ॥
पच्छइ हन्दमूइ-आयरिए । पुण धम्मेण गुणा लंकरिए ॥
पुणु पहवे संसारा राएं । कित्ति हरेण अणुत्तर बाएं ॥
पुणु रविषेणायरि पसाएं । बुद्धि ए अवगाहिय कइराएं ॥

'मानस' में राम-कथा की यह परिपाटी निरूपित हैं -

संभु कीन्ह यह चरित सुहावा । बहुरि कृपा करि उमहिं सुनावा ॥
सोइ सिव कागमुसुंडिहिं दीन्हा । राम-भगति अधिकारी चीन्हा ॥
तेहि सन जागवलिक पुनि पावा । तिन्ह पुनि भरद्वाज प्रति गावा ॥
में मुनि निज गुरु सन सुनी कथा सो सूकर खेत ।
समुझी नहिं तसि बालपन तब अति रहेउ अचेत ॥

स्वयंभू के आत्मनिवेदन और तुलसी के आत्मनिवेदन में काफी भावसादश्य हैं । 'पउम चरिउ' में स्वयंभू कहते हैं -

बुह-यण संयमु पहं विण्णवह । महु सरिसउ अण्ण णाहि कुमइ ॥
वायण्भु कयाइ ण जाणि यउ । णउ विधि-सुत्त वक्खाणियउ ॥
णा णिसुणिन पंच महाय कव्वु । णउ मरहु ण लक्खणु कुंदु सब्बु॥
णउ वुज्झिउ पिंगल-पच्छारू । णउ भामह दंडीय लंकारू ॥
वे वे साय तो वि णउ परिह रमि । वरि रयडा वुत्तु क्षबूबु करमि ॥
सामाणमास छुड मा विहडउ । छुडु आगम-जुत्ति किंपि धडउ ॥
कुडु होंति सु हासिय वयणाइं । गामेल्ल-मास परिहरणाइं ॥
एहु सज्जण लोमहु किउ विणउ । ज अबुहु पदरिसिउ अप्पणउ ॥
जं एवंबि रूसाइ कोवि खलु । तहो हत्थुत्थल्लिड लेउ छलु ॥
पिसुणें कि अब्मत्थिएण, जसु कोवि ण रूच्चइ ।
किं छण-इन्दु मरूगाहे, ण कंपंतु विभुच्चइ ॥

तुलसी ने भी अपनी लघुता प्रदर्शित की है -

निज बुधि बल भरोस मोहि नाहीं । तातें विनय करउं सब पाहीं ॥
करन चहउं रघुपति गुनगाहा । लघुमति मोरि चरित अवगाहा ॥
डूब न एकउ अंग उपाऊ । मन मति रंक मनोरथ राऊ ॥
मति अति नीच ऊंचि रुचि आछी । चहिअ अमिख जग जुरइ न काछी ॥
छमिहहिं सज्जन मोरि ढिठाई । सुनिहहिं बालवचन मन लाई ॥
जो बालक कह तोतरि बाता । सुनहिं मुदित मन पितु अरु माता ।
हंसहहिं कूर कुटिल कुविचारी । जे पर दूषन भूषन धारी ॥

--- --- ---

भाव भेद रख मेव अपारा । कवित दोष गुन विविध प्रकारा ।
कवित विवेक एक नहिं मोरे । सत्य कहउं लिखि कागद कोरे ॥

''भविरायसकहा' की निम्न पंक्तियों में भी बड़ी समानता है -

सुणिमित्तं जा अइं तासु ताम । गय पथहिणत्ति उड्डेवि साम ॥
वायंगि सुत्ति सहसहइ वाउ । पिय मेलावह कुलकुल काउ ॥
वामउ किलकिंचिउ लावएण । वाहिणउ अंगु नरिसिउ मएण ॥
दाहिणउ लोयणु फंदह सुवाहु । णं पणइ एण मग्गेण जाहु ॥

तुलसी ने भी उसी भाव की सम्पुष्टि की है -

दाहिन काग सुखेत सुहावा । नकुल वरस सब काहुन पावा ।
सानुकूल वह त्रिविध बयारी । सघट सबाल पाव वर नारी ॥
लोवा फिरि-फिरि दरस दिखावा । सुरभी सम्मुख शिशुहि आवा ॥
मृगमाला दाहिन दिशि आई । मंगल गन जनु दीन्ह दिखाई ॥

निष्कर्ष सूत्र :

'पउमचरिउ' जैन संस्कृति से ओतप्रोत राम-काव्य है । उसने 'मानस' को यत्र-तत्र प्रभावित किया है । स्वयंभू ओज के कवि थे । उनकी सबसे बड़ी देन सीता का चरित्र चित्रण है । तुलसी ने समूचे भारतीय मानस को प्रभावित किया है । वे अपने कृतित्व तथा साहित्य-स्रोतों के विषय में बड़े ईमानदार थे । हिन्दी का युग आते-आते उनका कोई नामलेवा नहीं रह गया था । किसी ने उनका स्तवन नहीं किया । इसका कारण था कि हिन्दी में आभार-प्रदर्शन की परिपाटी समाप्त हो गयी थी । इसके एकमेव अपवाद महाकवि गोस्वामी तुलसीदास थे जिन्होंने अपने पूर्व प्रमुख कवियों का तर्पण किया है । अन्य किसी कवि ने अपने पूर्ववर्ती कवियों का स्मरण नहीं किया । राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने 'साकेत' में रामकाव्य के गायकों तथा पुरस्कर्ताओं का सादर नामोल्लेख किया है ।

'पउम चरिउ' और 'रामचरित मानस' भारतीय साहित्य की वह अनूठी, अप्रतिम तथा प्रौढ़ उपलब्धियां हैं जिन्होंने रामकथा तथा रामकाव्य को युगांतर प्रदान किया है ।

प्रेमी आत्मजा अंगना; मित्र बंधु परिवार ।
जयन्तसेन सभी साथ, रह जलकमल विचार ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org